

## चम्पारण में महात्मा गाँधी का नील विरोधी आंदोलन



डॉ० मनोज कुमार गुप्त

एम.ए., पीएच.डी.

इतिहास, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय,

मुजफ्फरपुर।

अफ्रीका से लौटने के बाद गाँधी जी ने भारत के नवोदित राष्ट्रवाद का सफल प्रयोग किया था। वह धरती चम्पारण की ही धरती है और इस प्रयोग से समाजवादी चिंतन की पताका लहरा उठी थी। गाँधी जी की भूमिका से ही बिहार की धरती चम्पारण में सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह की त्रिपथगा प्रवाहित हुई तथा उनके रचनात्मक क्रियाकलापों से समाजवाद के परचम को लहराने में एक अपूर्व शक्ति का संचार हुआ। शोषित, पीड़ित, दलित जनता के जागरण का मार्ग प्रशस्त हुआ और छुआछूत के खिलाफ पहली बार आधुनिक बिहार में गाँधी जी ने घोर शंखनाद किया। यह रचनात्मक कार्यक्रम सामाजिक चेतना और आर्थिक समानता के रूप में पहला क्रांतिकारी कदम था जिसे ढाई हजार साल पूर्व एक मात्र महात्मा बुद्ध ने उठाया था। भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, गाँधी जी के इस अभियान में एकमात्र सक्रिय कार्यकर्ता, शिष्य और समर्पित प्राणी थे। उन्होंने “ गाँधी इन चम्पारण” में लिखा है— चम्पारण में जो कुछ हुआ, मेरी आशा के अनुरूप सारे देश में विराट पैमाने पर उसकी पुनरावृत्ति की गई। चम्पारण निलहे साहबों यानि गोरे भूपतियों के अत्याचार से मुक्त हुआ। भारत आज विदेशी राज्य से मुक्त है।<sup>1</sup>

महात्मा गाँधी का जन्म 1869 में 2 अक्टूबर के दिन भारतवर्ष के एक छोटे से प्रांत काठियावाड़ के पोरबंदर में हुआ था। उनके पिता करमचन्द गाँधी वंशानुगत दीवान का काम करते थे। जाति-पाँति की दृष्टि से वह वैश्य समाज के थे। समाज के हाशिए पर खड़े अछूतो, दलितो, पीड़ितों को उन्होंने हरिजन की संज्ञा दी और उन्हें ईश्वर पुत्र के रूप में देखा। अपने आश्रम में इन तिरस्कृतों को सर्वाधिक सम्मान दिया। अन्य लोगों के साथ इनको बराबरी का दर्जा दिया। लेकिन गाँधी जी का यह तरीका भारतीय ब्राह्मणों को पसंद नहीं आया और अंत में वह ब्राह्मणवादी

कट्टरता का शिकार बन गए। इस तरह गाँधी जी का जीवन चरित उनके समय में गरीबों के लिए "रामचरित" बन गया और अनायास ही लोग उनको अवतार समझने लगे।<sup>2</sup>

भारतीय राजनीति में गाँधी जी ने चमत्कार कर दिखाया। राष्ट्रीय आंदोलन में उन्होंने वर्ग-चेतना और जाति-चेतना से ऊपर रहकर गोलबंद होने की प्रेरणा दी। चरखा की नीति से प्रेरित होकर उद्योगपतियों ने उनका साथ दिया। धोती और चादर जैसे वस्त्र से प्रेरित होकर उनके अनुयायियों ने बड़ी संख्या में खादी वस्त्र धारण करके एक अलग पहचान बनाई। शाकाहार अपनाकर आम जनता ने भी सहानुभूति की त्योरी दिखाई। बहुत दिनों तक गाँधी जी ने अहमदाबाद के साबरमती आश्रम में वास किया और वहीं से उन्होंने खादी और स्वदेशी का अलख जगाया और सर्वोपरि महाराष्ट्र के नागपुर के निकट वर्धा आश्रम के द्वारा हरिजन उद्धार और अछूत उद्धार का सक्रिय अभियान चलाया। ब्राह्मणवादी रूढ़िवादी की सनातन सोच समझ के खिलाफ गाँधी जी की ओर से एक और घोर चुनौती थी। नवोदित गाँधीवादी वर्ग के लिए यह मानवाधिकार से कम नहीं था। धीरे-धीरे गैर ब्राह्मणवादी लोग अपने को अलग-थलग पाए— यह एक उच्चवर्गीय शांत आक्रोश था। इस बिन्दु पर गाँधी जी ने "यंग इंडिया" और हरिजन में लगातार लिखते रहे। इस पृष्ठभूमि में गाँधी जी को यदि देखा जाए तो बिहार के स्वाधीनता संघर्ष में जिस समाजवादी चिंतन का उभार हुआ वह सर्वथा भिन्न और मौलिक था।<sup>3</sup> चम्पारण में गाँधी जी की भूमिका मात्र नील विरोधी आंदोलन नहीं था, बल्कि नये बिहार की जागृति का आंदोलन था जो भारतीय आजादी के लिए छिड़े आंदोलन का आदर्श बन गया।

दुनिया के इतिहास की अनेक क्रांतियों की तरह चम्पारण का आंदोलन एक शोषणकारी आर्थिक व्यवस्था की भयंकर बुराईयों के विरुद्ध असंतोष तथा प्रतिरोध का परिणाम था। चम्पारण में यह प्रथा पूंजीवादी व्यवस्था के प्रभाव में वर्षों से कायम थी। इस प्रथा के अंतर्गत गोरे निलहे साहब बड़े पैमाने पर नील की खेती एवं उत्पादन इस क्षेत्र में करते आ रहे थे। उन्हें केवल अपने लाभ एवं मुनाफा की धुन रहती, इसके लिए उस क्षेत्र के सीधे-सादे एवं विपन्न ग्रामीण लोगों के हितों की वे कुछ भी परवाह नहीं करते। बिहार में जहाँ कहीं भी नील की खेती होती थी, अन्याय एवं भयंकर शोषण का सबसे विकृत रूप दिखलाई पड़ता था। निलहे साहब का दीन-हीन रैयतों के साथ व्यवहार लोमहर्षक अत्याचारों की एक लम्बी कहानी है। चम्पारण में

शोषण की यह प्रथा पूंजीवादी व्यवस्था के प्रभाव में वर्षों से कायम थी। इस प्रथा के अंतर्गत गोरे निलहे साहब बड़े पैमाने पर नील की खेती एवं उत्पादन इस क्षेत्र में करते आ रहे थे। उन्हें केवल अपने लाभ एवं मुनाफा की धुन रहती, इसके लिए इस क्षेत्र के सीधे-सादे एवं विपन्न ग्रामीण लोगों के हितों की वे कुछ भी परवाह नहीं करते। बिहार में जहाँ कहीं भी नील की खेती होती थी, अन्याय एवं भयंकर शोषण का सबसे विकृत रूप दिखाई पड़ता था। निलहे साहबों का दीन-हीन रैयतों के साथ व्यवहार लोमहर्षक अत्याचारों की एक लम्बी कहानी है।<sup>4</sup>

चम्पारण में महात्मा गाँधी की यात्रा चम्पारण के राजकुमार शुक्ल तथा अन्य लोगों के अनुरोध पर हुई। इन लोगों ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के दिसम्बर, 1916 में आयोजित 31वें अधिवेशन के दरम्यान लखनऊ में उनसे भेंट की थी। इस अधिवेशन में भारत के सभी भागों से 2300 प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे। बिहार के भी कई प्रतिनिधि<sup>5</sup> इसमें भाग लेने गए थे। इसका खास कारण यह था कि इस प्रांत से सम्बद्ध दो महत्वपूर्ण प्रस्ताव इस अधिवेशन में प्रस्तुत किये जाने वाले थे। इनमें एक था पटना विश्वविद्यालय विधेयक और दूसरा चम्पारण के निलहे साहबों एवं उनके रैयतों के संबंध पर। श्री राजकुमार शुक्ल, जिन्हें निलहे साहबों की ज्यादतियों का व्यक्तिगत कटु अनुभव था। चम्पारण के किसानों के प्रतिनिधि के रूप में लखनऊ कांग्रेस में भाग लेने गए थे। इनके विषय में महात्मा गाँधी ने कहा था: “श्री शुक्ल बिहार में हजारों लोगों पर से नील के कलंक को धो लेने के लिए कृतसंकल्प थे।”<sup>6</sup>

‘तीनकठिया’ चम्पारण में सर्वाधिक प्रचलित प्रथा थी। इसके अंतर्गत रैयत को अपने प्रति बीघा खेत के 3 कट्टे में अथवा कोठी के खेत में लम्बी अवधि तक नील उपजाना पड़ता था। इसके लिए औपचारिक रूप से सट्टे के अनुसार उसे मूल्य प्राप्त करने का अधिकार होता था। इस प्रथा से निलहों को सर्वाधिक लाभ होता था। दूसरी ओर अनेक तरीकों से रैयतों का शोषण होता था। अपने खेत में नील उपजाने के लिए अनेक तरह की धमकी देना, जबर्दस्ती बहुत कम मजदूरी और कभी-कभी बिना मजदूरी पर भी काम कराना, किसी कारण से नील नहीं उपजा सके तो उसके लिए भारी जुर्माना करना, इस अत्याचारी एवं कठोर प्रथा की कुछ विशेषताएँ थीं। जब कभी बेचारा रैयत इसके विरुद्ध आवाज उठाता या सुरक्षा की मांग करता तो निलहें साहब बड़ी कठोरता से उसे दबा देते।

1857-59 के राष्ट्रीय विप्लव के बाद के वर्षों में अत्याचार की इस दयनीय व्यवस्था के विरुद्ध कुछ प्रयत्न किए गए। 1859 में बंगाल के नदिया और यसोहर जिलों के रैयतों ने निलहों के कठोर अत्याचारों के विरुद्ध आवाज उठाई। बंगाल और बिहार के विभिन्न भागों में उस समय इसको लेकर काफी उत्तेजना फैली थी। हिन्दू पैट्रियट के प्रख्यात सम्पादक, हरीशचन्द्र मुखर्जी ने पीड़ित किसानों का पक्ष लिया। इसको लेकर व्यापक उत्तेजना फैली। दीनबंधु मित्र लिखित बंगला नाटक "नील दर्पण" (1860) में इसकी अभिव्यक्ति हुई।

सरकार ने विभिन्न स्थानों पर निलहे साहबों तथा उनके अत्याचारों के विरुद्ध जो गड़बड़ी होती थी उन्हें दबाने के लिए 1860 का विधान पारित किया। इसका उद्देश्य नील के ठीकों को कार्यान्वित करना तथा एक जाँच आयोग की नियुक्ति की व्यवस्था करना। जाँच आयोग का उद्देश्य था रैयतों की शिकायतों की जाँच करना। बंगाल सरकार के सचिव, सेटनकार इस आयोग का अध्यक्ष बनाया गया। आयोग के दूसरे सदस्य थे रिचार्ड टेम्पुल जो बाद में बंगाल के लेफ्टिनेंट गवर्नर हुए तथा डब्ल्यू. एफ. फरग्यशुन, निलहे जमींदारों के द्वारा नामजद देवरेड जॉन सेल और ब्रिटिश इंडिया एसोसिएशन द्वारा नामजद चन्द्रमोहन चटर्जी। नीले की खेती से उस स्थानीय लोगों पर कितने तरह के अत्याचार होते थे इसका उल्लेख करना कठिन है। ई. डब्ल्यू. एल. टावर ने, जो भी कभी फरीदपुर का मैजिस्ट्रेट रह चुका था, इस आयोग के संबंध में अपना ब्यान देते हुए कहा, एक बात मैं और कहना चाहूँगा कि धर्म प्रचारकों की यह कहने के लिए काफी आलोचना की गई है कि "नील का एक भी बक्सा इंग्लैंड नहीं ऐसा पहुँचता जो आदमी के खून से सना हुआ नहीं हो" यह एक अतिशयोक्ति हो सकती है। शब्द मेरे हैं और मैं फरीदपुर जिला के एक मैजिस्ट्रेट के रूप में अपने अनुभव के आधार पर कह सकता हूँ कि यह शब्दशः सही है। मैंने कई रैयतों को देखा है, मैजिस्ट्रेट की हैसियत से उन्हें मेरे पास भेजा गया था जिनके शरीर पर बरछों के आघात थे। मैंने ऐसे रैयतों को भी देखा है जिन्हें फोर्ड एक प्लांटर ने गोली मार दी थी। मैंने इसे लिख छोड़े हैं कि किस तरह कई लोगों को बरछा से पहले मारा गया था और फिर कहीं गायब कर दिया गया है। नील उपजाने की ऐसी व्यवस्था को मैं खून बहने की व्यवस्था मानता हूँ।

आयोग में निलहे साहबों और रैयतों के संबंध सुधारने हेतु तथा रैयतों के हित संरक्षण हेतु कुछ अनुशंसाएँ की गईं। बंगाल के तत्कालीन लेफ्टिनेंट गवर्नर, जॉन पीटर ग्रान्ट अनुशंसाओं से पूर्णतया सहमत था। आयोग पर अपनी सहमति देते हुए उसने कहा कि इनसे “सभी संबद्ध पक्षों को लाभ होगा।” सरकार ने इनमें से अधिकांश को लागू करने का प्रयत्न किया। फलतः बंगाल में बहुत काल तक नील की खेती की अत्याचारी व्यवस्था कायम नहीं रही।

किंतु उत्तर बिहार के निलहे रैयत की दुःख गाथा का कोई अंत नहीं था। उनकी स्थिति में सुधार लाने के किसी उद्देश्य से कोई प्रयत्न भी नहीं हो रहा था। अत्याचार से त्रस्त एवं अपने दुःखमय जीवन से उबकर बिहार के रैयतों ने 1867 में विद्रोह कर दिया। विद्रोह की आग पहले-पहल लाल सरैया कोठी में फूटी और वहाँ से पड़ोस के अनेक दूसरे स्थानों में फैल गई। इससे निलहे साहब के हित पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा एवं उन्हें चिंता हुई। उन्होंने अपने हितों का संरक्षण करने हेतु सरकार से सहायता मांगी। सरकार ने उनके अनुरोध पर मोतिहारी में एक स्मॉल कॉल की स्थापना कर दी थी। इसका उद्देश्य था प्लान्टरों द्वारा नील के सट्टों की शर्तें तोड़ने के अपराधों का जल्दी से निबटारा करना। इस न्यायालय में दो न्यायाधीशों की नियुक्ति की गई थी। दीन हीन तथा भीरु किसानों को भयभीत करने के लिए यही काफी था। जो भी मामला अदालत के सम्मुख आया उसमें बिना किसी अपवाद के साहबों के पक्ष में न्यायालय ने फैसला दिया।

रैयतों के दुःख की कोई सीमा नहीं थी। 5 दिसम्बर, 1867 को बिजरीन ग्राम के महाशय सिंह तथा कुछ अन्य किसानों ने सरकार के समक्ष इस आशय के आवेदन प्रस्तुत किया—

“यह गाँव निलहे साहबों को इजारा में दिया गया है। साहबों ने सारी जमीन नील की खेती के लिए नियत कर दी है। अन्य या दूसरी जरूरी वस्तुएँ उपजाने के लिए एक भी खेत नहीं छोड़ा गया है। धान के खेत, फिरंगियों की दया पर है। इन सबों से भी अधिक हर मौसम में और वस्तुतः सारे वर्ष भर यहाँ किसानों को दिन-रात साहबों का काम करना पड़ता है। इसके लिए उन्हें किसी तरह की मजदूरी भी मिलने की आशा नहीं रहती। उनके मवेशियों को जबर्दस्ती खोल लिया जाता है और अक्सर साहबों के खेत जोतने में लगा दिया जाता है। स्थानीय जमींदार

तथा जिला के पुलिस एवं अन्य अधिकारियों के पास कई बार शिकायतें की गई हैं किंतु किसानों के सभी प्रयत्न साहबों के प्रभाव एवं शक्ति से विफल होते रहे हैं।”

कांग्रेस सरकार से उत्तर बिहार में यूरोपीय कोठीवालों एवं नीलहे रैयतों के बीच तनावपूर्ण संबंधों और कृषि समस्याओं के कारणों की जाँच तथा उन्हें दूर करने के उपायों की अनुशंसा करने हेतु अधिकारियों तथा गैर-सरकारी सदस्यों की एक संयुक्त समिति नियुक्त करने का अनुरोध करती है।<sup>7</sup>

कांग्रेस ने जब इस प्रस्ताव को सर्वसम्मति से पारित कर दिया। तदुपरांत बिहारी प्रतिनिधियों ने महात्मा गाँधी को चम्पारण आने का अनुरोध किया। विशेष करके राजकुमार शुक्ल ने उनसे स्वयं चम्पारण आने एवं वहाँ रैयतों की दयनीय अवस्था देखने पर बल दिया। महात्मा गाँधी ने आगामी मार्च या अप्रैल माह में चम्पारण की यात्रा करने का वचन दिया। कलकत्ता अधिवेशन से वे शुक्ल के साथ पटना होते हुए 11 अप्रैल को मुजफ्फरपुर पहुँचे। 15 अप्रैल, 1917 को दोपहर की गाड़ी से महात्मा गाँधी ने मुजफ्फरपुर के बाबू धरणीधर और रामनौमी प्रसाद के साथ मोतिहारी के लिए प्रस्थान किया। इसी बीच उन्होंने जी. बी. बी. कॉलेज (वर्तमान लंगट सिंह कॉलेज) में मुजफ्फरपुर के नागरिकों के साथ जिनमें यहाँ के वकील भी थे। नागरिकों को जागरूक करने का प्रयास किया जो नागरिक स्वतंत्रता का आधार-स्तंभ बना। यह सोचकर कि सरकार किसी भी समय उनकी गिरफ्तारी का वारंट जारी कर सकती थी। महात्मा गाँधी ने एक ट्रंक में अपनी आवश्यकता की कुछ वस्तुएँ रख ली थीं। वस्तुतः महात्मा गाँधी भोजन, वस्त्र एवं अन्य जरूरतों के संदर्भ में सर्वाधिक सरल जीवन व्यतीत करने के आदी हो चुके थे। गाड़ी तीसरी पहर 3 बजे मोतिहारी पहुँची। स्टेशन से महात्मा गाँधी को सीधे बाबू गोरख प्रसाद नामक एक स्थानीय वकील के घर ले जाया गया। गोरख बाबू का मकान उस समय से एक धर्मशाला सा बन गया।<sup>8</sup>

राजकुमार शुक्ल ने चम्पारण के कोने-कोने में पैदल यात्रा करके निलहों के अत्याचार के खिलाफ रैयतों को प्रेरित किया और बयान देने के लिए बेतिया भेजा। तीस हजार से अधिक रैयतों ने बयान दिया। देश के कोने-कोने से चम्पारण आने के लिए नेताओं का तांता बंध गया।

विख्यात इतिहासकार दिवंगत के. के. दत्त ने बहुत ही सही लिखा है कि “चम्पारण भारत में नई जागृति, नई राष्ट्रीयता का संवर्धन स्थल” बन गया और राजकुमार शुक्ल एक वीर

कृषक सेनानी नेता के रूप में उभरकर आए। चम्पारण में महात्मा गाँधी के कार्य जादू के समान थे। नौकरशाही के लौहकपाट की कठोरता पिघलकर उनकी अंतरात्मा की आवाज बन गई।

### संदर्भ सूची :-

1. डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, गाँधी इन चम्पारण, पृ. 110।
2. मोहन दास करमचन्द गाँधी, आत्मकथा, पृ. 92।
3. मोहन दास करमचन्द गाँधी, यंग इंडिया।
4. के. के. दत्त, बिहार में स्वातंत्र्य आंदोलन का इतिहास, भाग-1, पृ. 182-188।
5. दरभंगा के बाबू ब्रज किशोर प्रसाद के साथ लक्ष्मण प्रसाद, भुवनेश्वर मिश्र, कमेश्वरी चरण सिन्हा और राम बहादुर प्रसाद गुप्त थे।
6. 21वीं भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की रिपोर्ट, पृ. 68।
7. आत्मकथा, पृ. 494।
8. वही, पृ. 502।